सुहपयडीण विसोही, तिव्वो असुहाण संकिलेसेण ।
विवरीदेण जहण्णो, अणुभागो सव्वपयडीणं ॥163॥

≈अन्वयार्थ – (सुहपयडीण) शुभप्रकृतियों का (तिव्वो) तीव्र अनुभागबंध (विसोही) विशुद्ध परिणामों से होता है।

≈(असुहाण) अशुभ प्रकृतियों का तीव्र अनुभाग बंध (संकिलेसेण) संक्लेश परिणामों से होता है ।

≈(सव्वपयडीणं) सर्व प्रकृतियों का (जहण्णो अणुभागो) जघन्य अनुभाग-बंध (विवरीदेण) विपरीत परिणामों से होता है अर्थात् शुभ प्रकृतियों का जघन्य अनुभाग बन्ध संक्लेश परिणामों से और अशुभ प्रकृतियों का जघन्य अनुभाग बन्ध विशुद्ध परिणामों से होता है ॥163॥

www.JainKosh.org

अनुभाग-बंध

कर्मों की फलदान शक्ति को अनुभाग कहते हैं ।

www.JainKosh.org

नियम

	उत्कृष्ट अनुभाग-बंध	जघन्य अनुभाग-बंध
शुभ प्रकृतियाँ	विशुद्ध परिणाम द्वारा	संक्लेश परिणाम द्वारा
अशुभ प्रकृतियाँ	संक्लेश परिणाम द्वारा	विशुद्ध परिणाम द्वारा

मंद कषायरूप परिणाम	• विशुद्ध परिणाम
तीव्र कषायरूप परिणाम	• संक्लेश परिणाम

www.JainKosh.org

बादालं तु पसत्था, विसोहिगुणमुक्कडस्स तिव्वाओ ।
बासीदि अप्पसत्था, मिच्छुक्कडसंकिलिट्ठस्स ॥164॥

≈अन्वयार्थ – (बादालं तु पसत्था) 42 पुण्य प्रकृतियों का (तिव्वाओ) तीव्र अनुभाग-बंध (विसोहिगुणमुक्कडस्स) उत्कृष्ट विशुद्धिगुणयुक्त जीव के होता है और

≈(बासीदि अप्पसत्था) 82 अप्रशस्त प्रकृतियों का उत्कृष्ट अनुभाग बंध (मिच्छुक्कडसंकिलिट्ठस्स) उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम युक्त मिथ्यादृष्टि जीव के होता है ॥164॥

www.JainKosh.org

बंध-योग्य प्रकृतियाँ

(120 + 4 = 124)

वर्णादि-4 प्रकृतियाँ प्रशस्त और अप्रशस्त दो बार गिनी हैं

42 प्रशस्त प्रकृतियाँ

विशुद्धता की उत्कृष्टता से उत्कृष्ट अनुभाग-बंध

82 अप्रशस्त प्रकृतियाँ

उत्कृष्ट संक्लेश से मिथ्यादृष्टि जीव को उत्कृष्ट अनुभाग-बंध

www.JainKosha.org

आदाओ उज्जोओ, मणुवतिरिक्खाउगं पसत्थासु ।
मिच्छस्स होंति तिव्वा, सम्माइट्ठिस्स सेसाओ ॥165॥

≈अन्वयार्थ – (पसत्थासु) 42 प्रशस्त प्रकृतियों में से (आदाओ उज्जोओ मणुवतिरिक्खाउगं) आतप, उद्योत, मनुष्यायु और तिर्यञ्चायु – इन चार का तीव्र अनुभाग-बंध (मिच्छस्स) विशुद्ध मिथ्यादृष्टि के होता है और

≈(सेसाओ) शेष 38 प्रकृतियों का (तिव्वा) तीव्र अनुभाग-बंध (सम्माइट्ठिस्स) विशुद्ध सम्यग्दृष्टि के होता है ॥165॥

www.JainKosh.org

प्रशस्त प्रकृतियों के उत्कृष्ट अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी	कारण
आतप, उद्योत	मिथ्यादृष्टि जीव	क्योंकि आतप का बंध प्रथम गुणस्थान में ही होता है, तथा उद्योत का बंध सासादन तक ही होता है । अत: इनका उत्कृष्ट बंध इन्हीं दो में पाया जायेगा ।
मनुष्यायु, तिर्यंचायु	मिथ्यादृष्टि जीव	क्योंकि उत्कृष्ट अनुभाग वाली मनुष्य, तिर्यंच आयु भोगभूमि संबंधी है तथा भोगभूमि संबंधी मनुष्य, तिर्यंच आयु का बंध मिथ्यादृष्टि मनुष्य, तिर्यंच ही करते हैं, सम्यग्दृष्टि नहीं ।
शेष 38	विशुद्ध सम्यग्दृष्टि	क्योंकि सम्यग्दृष्टि के विशुद्धि अधिक होने से इनका उत्कृष्ट अनुभाग-बंध पाया जा सकेगा ।

मणुओरालदुवज्जं, विसुद्धसुरणिरयअविरदे तिव्वा ।
देवाउ अप्पमत्ते, खवगे अवसेसबत्तीसा ॥166॥

≈ अन्वयार्थ – (मणुओरालदुवज्जं) मनुष्यद्विक, औदारिकद्विक, वज्रऋषभनाराच संहनन का (तिव्वा) तीव्र अनुभाग-बंध (विसुद्धसुरणिरयअविरदे) विशुद्ध परिणामी असंयत सम्यग्दृष्टि देव और नारकी जीव करता है ।

≈ (देवाउ) देवायु का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध (अप्पमत्ते) अप्रमत्त गुणस्थान में होता है ।

≈ (अवसेस बत्तीसा) शेष रही 32 पुण्य प्रकृतियों का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध (खवगे) क्षपक श्रेणी में होता है ॥166॥

www.JainKosh.org

शेष 38 प्रशस्त प्रकृतियों के उत्कृष्ट अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
मनुष्य-2 औदारिक-2 वज्रऋषभनाराच	विशुद्ध देव-नारकी सम्यग्दृष्टि जो अनंतानुबंधी की विसंयोजना के अंतिम समयवर्ती हैं क्योंकि वहीं पर देव-नारकी को सर्वाधिक विशुद्धि पायी जाती है ।
देवायु	अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती
शेष 32	क्षपक श्रेणी वाला जीव । 6 प्रकृतियों का उत्कृष्ट बंध पूर्व के गुणस्थानों में कहा क्योंकि क्षपक जीव के इन 6 प्रकृतियों का बंध पाया नहीं जाता ।

उवघादहीणतीसे, अपुव्वकरणस्स उच्चजससादे ।
सम्मेलिदे हवंति हु, खवगस्सऽवसेसबत्तीसा ॥167॥

≈अन्वयार्थ – (अपुव्वकरणस्स) अपूर्वकरण के छठे भाग में व्युच्छिन्न (उवघादहीणतीसे) तीस प्रकृतियों में से उपघात रहित शेष 29 प्रकृतियाँ और (उच्चजससादे) उच्च गोत्र, यशकीर्ति, साता वेदनीय – ये 3 प्रकृतियाँ (सम्मेलिदे) मिलाने पर (खवगस्स) क्षपक की (अवसेसबत्तीसा) शेष रही 32 प्रकृतियाँ (हवंति हु) होती हैं ॥167॥

www.JainKosh.org

शेष 32 प्रकृतियों के उत्कृष्ट अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
नामकर्म की 29 प्रकृतियाँ जो अपूर्वकरण में व्युच्छिन्न होती हैं (30 – उपघात)	अपूर्वकरण के छठे भाग के अंतिम समयवर्ती क्षपक
साता वेदनीय उच्च गोत्र यश:कीर्ति	अंतिम समयवर्ती सूक्ष्मसांपराय क्षपक

मिच्छस्संतिमणवयं, णरतिरियाऊणि वामणरतिरिये ।
एइंदिय आदावं, थावरणामं च सुरमिच्छे ॥168॥

≈ अन्वयार्थ – (मिच्छस्संतिमणवयं) मिथ्यात्व गुणस्थान की बंध से व्युच्छिन्न अंतिम सूक्ष्मादि नौ प्रकृतियाँ और (णरतिरियाऊणि) मनुष्यायु और तिर्यञ्चायु का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध (वामणरतिरिए) मिथ्यादृष्टि मनुष्य और तिर्यञ्च में होता है ।

≈ (एइंदिय आदावं थावरणामं च) एकेन्द्रिय, आतप और स्थावर नामकर्म का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध (सुरमिच्छे) मिथ्यादृष्टि देव में होता है ॥168॥

www.JainKosh.org

अप्रशस्त प्रकृतियों के उत्कृष्ट अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण विकलत्रय नरक-2, नरकायु	संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि मनुष्य, तिर्यंच क्योंकि पाप प्रकृतियाँ संक्लेश परिणामों से उत्कृष्ट अनुभाग वाली बंधती हैं ।
एकेन्द्रिय जाति, स्थावर	अपनी आयु के 6 माह शेष रहने पर संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि देव
मनुष्यायु, तिर्यंचायु	विशुद्ध परिणामी मिथ्यादृष्टि मनुष्य, तिर्यंच
आतप	अपनी आयु के 6 माह शेष रहने पर विशुद्ध मिथ्यादृष्टि देव

* मनुष्यायु, तिर्यंचायु, आतप — ये प्रशस्त प्रकृतियाँ हैं ।

उज्जोवो तमतमगे, सुरणारयमिच्छगे असंपत्तं ।
तिरियदुगं सेसा पुण, चउगदिमिच्छे किलिट्ठे य ॥169॥

≈ अन्वयार्थ – (तमतमगे) तमस्तमनामक सातवीं पृथ्वी में (उज्जोवो) उद्योत प्रकृति का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध होता है ।

≈ (असंपत्तं) असंप्राप्तासृपाटिका संहनन (तिरियदुगं) तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी का तीव्र अनुभाग-बंध (सुरणारयमिच्छगे) मिथ्यादृष्टि देव व नारकी बांधते हैं ।

≈ (पुण सेसा) पुनः शेष 68 प्रकृतियों का तीव्र अनुभाग-बंध (चदुगदि मिच्छे किलिट्ठे य) चारों गति के संक्लेश परिणाम वाले मिथ्यादृष्टि जीव बांधते हैं ॥169॥

www.JainKosh.org

अप्रशस्त प्रकृतियों के उत्कृष्ट अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
उद्योत	उपशम सम्यक्त्व के सम्मुख सप्तम पृथ्वी का विशुद्ध नारकी क्योंकि सम्यग्दृष्टि के उद्योत का बंध नहीं होता ।
असंप्राप्तासृपाटिका, तिर्यंच-2	संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि देव, नारकी
शेष 68 प्रकृतियाँ	चारों गति के संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि जीव

* उद्योत प्रशस्त प्रकृति है ।

www.JainKosh.org

वण्णचउक्कमसत्थं, उवघादो खवगघादि पणवीसं ।
तीसाणमवरबंधो, सगसगवोच्छेदठाणम्हि ॥170॥

≈अन्वयार्थ – (असत्थं वण्णचउक्कं) अप्रशस्त वर्णचतुष्क (उवघादो) उपघात और (खवगघादि पणवीसं) क्षपक श्रेणी में व्युच्छिन्न होने वाली घातिया कर्मों की पच्चीस प्रकृतियाँ अर्थात् 5 ज्ञानावरण, 5 अंतराय, 4 दर्शनावरण, निद्रा, प्रचला, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, संज्वलन 4 कषाय – इन (तीसाणं) 30 प्रकृतियों का (अवरबंधो) जघन्य अनुभाग-बंध (सगसगवोच्छेदठाणम्हि) अपने-अपने बंध-व्युच्छित्ति स्थान में होता है ॥170॥

30 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
निद्रा-प्रचला	अपूर्वकरण क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय
अप्रशस्त वर्णादि - 4, उपघात	अपूर्वकरण क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय
हास्यादि - 4	अपूर्वकरण क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय
पुरुषवेद	अनिवृत्तिकरण क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय
संज्वलन - 4	अनिवृत्तिकरण क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय
ज्ञानावरण - 5 दर्शनावरण - 4 अंतराय – 5	सूक्ष्मसांपराय क्षपक के बंध-व्युच्छित्ति के समय

अणथीणतियं मिच्छं, मिच्छे अयदे हु बिदियकोहादी ।
देसे तदियकसाया, संजमगुणपच्छिदे सोलं ॥171॥

≈अन्वयार्थ – (अणथीणतियं) अनन्तानुबंधी की चार कषाय, स्त्यानगृद्धि-त्रिक और (मिच्छं) मिथ्यात्व – ये 8 प्रकृति (मिच्छे) मिथ्यात्व गुणस्थान में,

≈(बिदियकोहादी) द्वितीय अप्रत्याख्यान क्रोधादि चार कषाय (हु अयदे) असंयत गुणस्थान में,

≈(तदियकसाया) तृतीय प्रत्याख्यान-4 कषाय (देसे) देशसंयत गुणस्थान में,

≈इस प्रकार (सोलं) सोलह प्रकृतियाँ (संजमगुणपत्थिदे) संयमगुण को धारण करने के अंतिम समय में जघन्य अनुभागसहित बंधती हैं ॥171॥

www.JainKosh.org

16 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी	विशेष
अनंतानुबंधी-4, स्त्यानगृद्धि-3, मिथ्यात्व	मिथ्यादृष्टि	जो संयम प्राप्त करने के सम्मुख है अर्थात् सप्तम गुणस्थान को प्राप्त करने वाला है ऐसा मनुष्य
अप्रत्याख्यान-4	अविरत सम्यग्दृष्टि	
प्रत्याख्यान-4	देशसंयत	

अनंतानुबंधी-4 और स्त्यानगृद्धि-3 यद्यपि सासादन में भी बंधती है, तथापि वहाँ संक्लेश परिणाम होने के कारण उनका जघन्य बंध नहीं होता ।

मिथ्यात्व से सप्तम गुणस्थान प्राप्त करने की विशुद्धि से अविरत सम्यक्त्व से सप्तम गुणस्थान प्राप्त करने की विशुद्धि अधिक है ।

आहारमप्पमत्ते, पमत्तसुद्धेव अरदिसोगाणं ।
णरतिरिये सुहुमतियं, वियलं वेगुव्वछक्काऊ ॥172॥

≈ अन्वयार्थ – (आहारं) आहारकद्विक का जघन्य अनुभाग-बंध (अप्पमत्ते) संक्लेश परिणाम युक्त अप्रमत्त गुणस्थान में होता है ।

≈ (अरदिसोगाणं) अरति और शोक का जघन्य अनुभाग-बंध (पमत्तसुद्धेव) तत्प्रायोग्यविशुद्ध प्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव को होता है ।

≈ (सुहुमतियं) सूक्ष्मत्रिक अर्थात् सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण (वियलं) द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय (वेगुव्वछक्काऊ) वैक्रियिक षट्क और चार आयु – इन सोलह प्रकृतियों का जघन्य अनुभाग-बंध (णरतिरिये) मनुष्य व तिर्यंच करता है ॥172॥

JainKosh.org

20 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
आहारक-2	प्रमत्तसंयत गुणस्थान के सम्मुख हुआ संक्लेशी अप्रमत्तसंयत
अरति, शोक	अप्रमत्तसंयत गुणस्थान के सम्मुख हुआ विशुद्ध प्रमत्तसंयत
सूक्ष्म-3, विकलत्रय वैक्रियिक-6 आयु-4	मिथ्यादृष्टि मनुष्य, तिर्यंच

सुरणिरये उज्जोवोरालदुगं तमतमम्हि तिरियदुगं । णीचं च तिगदिमज्झिम-परिणामे थावरेयक्खं ॥173॥

≈ अन्वयार्थ - (उज्जोवोरालदुगं) उद्योत और औदारिक-द्विक का जघन्य अनुभाग-बंध (सुरणिरये) संक्लेश-परिणामी देव और नारकी के होता है ।

≈ (तिरियदुगं) तिर्यंच-द्विक (च) और (णीचं) नीच गोत्र प्रकृति (तमतमम्मि) महातमप्रभा नामक सप्तम पृथ्वी नरक में जघन्य अनुभागसहित बंधती हैं ।

≈ (थावरेयक्खं) स्थावर और एकेन्द्रिय प्रकृति (तिगदिमज्झिमपरिणामे) नरक के बिना तीन गति वाले जीव के मध्यम परिणाम में जघन्य अनुभागसहित बंधती हैं ॥173॥

www.JainKosh.org

8 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
उद्योत, औदारिक-2	संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि देव, नारकी
तिर्यंच-2, नीचगोत्र	उपशम सम्यक्त्व के सम्मुख सप्तम पृथ्वी का विशुद्ध नारकी
स्थावर, एकेन्द्रिय	मध्यम परिणामी तिर्यंच, मनुष्य, देव

सोहम्मोत्ति य तावं, तित्थयरं अविरदे मणुस्सम्मि ।
चदुगदिवामकिलिट्ठे, पण्णरस दुवे विसोहीये ॥174॥

≈अन्वयार्थ – (तावं) आतप प्रकृति (सोहम्मोत्ति य) सौधर्म-युगल तक के देवों में जघन्य अनुभागसहित बंधती है।

≈(तित्थयरं) तीर्थंकर प्रकृति (अविरदे मणुस्सम्मि) नरक जाने को सम्मुख हुए असंयत मनुष्य के जघन्य अनुभागसहित बंधती है ।

≈(पण्णरस) आगे की गाथा में कही गयी 15 प्रकृतियाँ (चदुगदिवामकिलिट्ठे) चारों गति के संक्लेशपरिणामी मिथ्यादृष्टि जीव के और (दुवे) दो प्रकृतियाँ (विसोहीये) चारों गति के विशुद्ध परिणामी मिथ्यादृष्टि जीव के जघन्य अनुभागसहित बंधती हैं ॥174॥

www.JainKosh.org

19 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
आतप	संक्लिष्ट भवनत्रिक, सौधर्म-2 देव
तीर्थंकर	नरक जाने को सम्मुख असंयत सम्यग्दृष्टि मनुष्य
15 प्रशस्त प्रकृतियाँ	चारों गति के संक्लिष्ट मिथ्यादृष्टि
2 अप्रशस्त प्रकृतियाँ	चारों गति के विशुद्ध मिथ्यादृष्टि

परघाददुगं तेजदु, तसवण्णचउक्क णिमिणपंचिंदी ।
अगुरुलहुं च किलिट्ठे, इत्थिणउंसं विसोहीये ॥175॥

≈ अन्वयार्थ - (तसवण्णचउक्क) त्रस-चतुष्क, वर्ण-चतुष्क, (णिमिणपंचिंदी) निर्माण, पंचेन्द्रिय (अगुरुलहुं च) और अगुरुलघु – ये (किलिट्ठे) संक्लेश परिणाम में बंधने वाली पंद्रह प्रकृतियाँ हैं

≈ और (इत्थिणउंसं) स्त्रीवेद और नपुंसकवेद – ये दो प्रकृतियाँ (विसोहीये) विशुद्ध परिणाम में जघन्य अनुभागसहित बंधती हैं ॥175॥

17 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
परघात-उच्छ्वास, तैजस-2 त्रस-4, प्रशस्त वर्ण-4 निर्माण, पंचेन्द्रिय जाति, अगुरुलघु	संक्लिष्ट चतुर्गति के जीव
नपुंसक वेद, स्त्री वेद	चतुर्गति के विशुद्ध जीव

सम्मो वा मिच्छो वा, अट्ठ अपरियट्टमज्झिमो य जदि ।
परिवट्टमाणमज्झिम-मिच्छाइट्ठि दु तेवीसं ॥176॥

≈अन्वयार्थ – (अट्ठ) आगे की गाथा में बतायी गयी आठ प्रकृतियों को (अपरियट्टमज्झिमो) अपरिवर्तमान मध्यमपरिणामी (सम्मो वा मिच्छो वा) सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि जीव जघन्य अनुभागसहित बांधता है ।

≈(दु) परंतु (तेवीसं) तेईस प्रकृतियों को (परिवट्टमाण-मज्झिममिच्छाइट्ठी) परिवर्तमान मध्यम-परिणामी मिथ्यादृष्टि जीव जघन्य अनुभागसहित बांधता है ॥176॥

www.JainKosh.org

अपरिवर्तमान परिणाम

प्रत्येक समय में जो विशुद्ध या संक्लेश
परिणाम बढ़ते या घटते ही जायें
उन्हें अपरिवर्तमान परिणाम कहते हैं ।

विशुद्ध परिणाम (बढ़ते ही जाएँ) ⟶

विशुद्ध परिणाम घटते ही जाएँ ⟵

ऐसे ही संक्लेश परिणाम पर भी लगाना ।

परिवर्तमान परिणाम

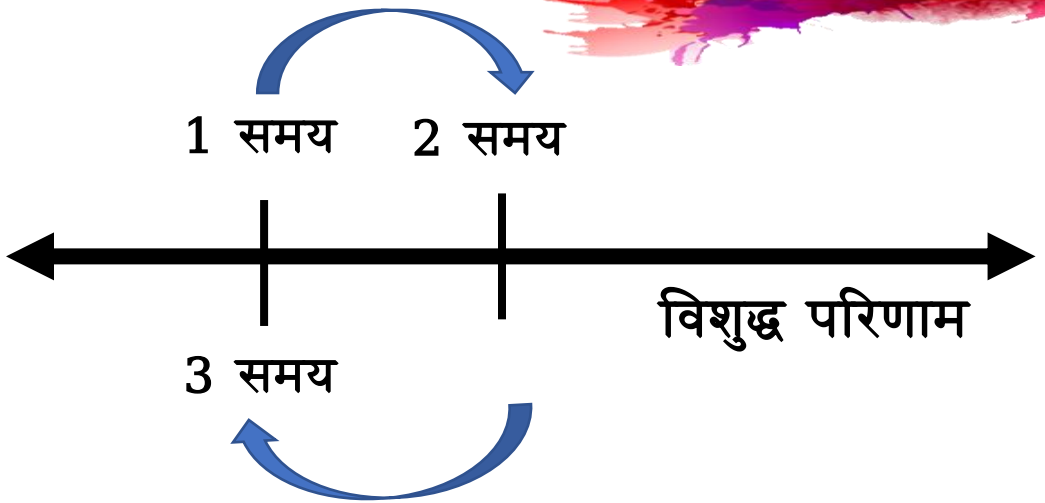

जिस परिणाम को प्राप्त होकर अन्य परिणाम प्राप्त किया,

पुनः अगले समय में प्रथम समय वाला ही परिणाम प्राप्त करना संभव हो,

ऐसे परिणामों को परिवर्तमान परिणाम कहते हैं ।

ऐसे ही संक्लेश भावों पर भी लगाना ।

- ये परिणाम भी जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट – ऐसे 3 प्रकार के हैं ।
- उनमें मध्यम परिणामों के द्वारा जघन्य बंध होता है, जघन्य या उत्कृष्ट परिणामों के द्वारा नहीं ।

31 प्रकृतियों के जघन्य अनुभाग-बंध के स्वामी

प्रकृति	स्वामी
8 प्रकृतियाँ	अपरिवर्तमान मध्यम परिणामी सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि
शेष 23 प्रकृतियाँ	परिवर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि

www.jainkosh.org

थिरसुहजससाददुगं, उभये मिच्छेव उच्चसंठाणं ।
संहदिगमणं णरसुरसुभगादेज्जाण जुम्मं च ॥177॥

≈अन्वयार्थ - (थिरसुहजससाददुगं) स्थिरद्विक, शुभद्विक, यशद्विक और साताद्विक – ये 8 प्रकृतियाँ (उभये) सम्यग्दृष्टि अथवा मिथ्यादृष्टि के जघन्य अनुभागसहित बंधती हैं ।

≈तथा (उच्चसंठाणं) उच्च गोत्र, छह संस्थान (संहदिगमणं) छह संहनन, प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति (णरसुरसुभगादेज्जाण जुम्मं च) मनुष्यद्विक, स्वरद्विक, सुभगद्विक, आदेयद्विक – ये 23 प्रकृतियाँ मिथ्यादृष्टि के ही जघन्य अनुभागसहित बंधती हैं ॥177॥

जघन्य अनुभाग-बंध — 31 प्रकृतियाँ

8 प्रकृतियाँ (सम्यग्दृष्टि, मिथ्यादृष्टि)

- स्थिर-अस्थिर
- शुभ-अशुभ
- यश-अयश
- साता-असाता

23 प्रकृतियाँ (मिथ्यादृष्टि)

- उच्च गोत्र
- संस्थान-6
- संहनन-6
- विहायोगति-2
- मनुष्य-2
- सुस्वर-दुस्वर
- सुभग-दुर्भग
- आदेय-अनादेय

घादीणं अजहण्णोणुक्कस्सो वेयणीयणामाणं । अजहण्णमणुक्कस्सो, गोदे चदुधा दुधा सेसा ॥178॥

≈अन्वयार्थ - (घादीणं) घाति कर्मों का (अजहण्णो) अजघन्य अनुभाग-बन्ध (वेयणीय-णामाणं) वेदनीय और नामकर्म का (अणुक्कस्सो) अनुत्कृष्ट अनुभाग-बन्ध (गोदे) गोत्रकर्म का (अजहण्णमणुक्कस्सो) अजघन्य और अनुत्कृष्ट अनुभाग-बन्ध (चदुधा) सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव – इस प्रकार चार प्रकार का होता है।

≈(सेसा) शेष सभी बंध (दुधा) सादि और अध्रुव के भेदों से दो प्रकार हैं ॥178॥

www.JainKosh.org

	जघन्य	अजघन्य	उत्कृष्ट	अनुत्कृष्ट
4 घातिया कर्म	सादि, अध्रुव	चारों	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव
वेदनीय, नाम	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	चारों
गोत्र	सादि, अध्रुव	चारों	सादि, अध्रुव	चारों
आयु	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव	सादि, अध्रुव

www.JainKosh.org

3 घातिया कर्म

इनका जघन्य अनुभाग-बंध 10वें गुणस्थान में होता है, अतः इनका अजघन्य बंध चार प्रकार का होता है।

अनादि	• जब तक 10वाँ गुणस्थान प्राप्त नहीं होता, तब तक इनका अजघन्य अनुभाग-बंध अनादि रहता है ।
सादि	• 11वें गुणस्थान से उतरकर 10वें अथवा चतुर्थ गुणस्थान में जब घातिया का बंध प्रारंभ होता है, तब अजघन्य का सादि बंध होता है ।
ध्रुव	• अभव्य जीव की अपेक्षा कभी अजघन्य बंध का अंत नहीं आता, अतः ध्रुव बंध है ।
अध्रुव	• 10वें गुणस्थान में जब अजघन्य बंध समाप्त होकर जघन्य बंध होता है, तब अजघन्य का अध्रुव बंध कहलाता है ।

इसी प्रकार मोहनीय कर्म का भी जानना चाहिए । पर उसका जघन्य अनुभाग-बंध 9वें गुणस्थान में होता है, इतना विशेष है ।

इसी प्रकार चूंकि वेदनीय, नाम का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध 10वें गुणस्थान में होता है, अतः अनुत्कृष्ट बंध चार प्रकार का होता है ।

www.JainKosh.org

गोत्र कर्म के अजघन्य, अनुत्कृष्ट के 4-4 प्रकार

गोत्र कर्म का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध 10वें गुणस्थान में होता है, अत: अनुत्कृष्ट बंध चार प्रकार का होता है ।

गोत्र कर्म का जघन्य अनुभाग-बंध विशिष्ट अवस्था में ही होता है । 7वीं पृथ्वी का नारकी जो उपशम सम्यक्त्व के सम्मुख है, वही गोत्र कर्म का जघन्य अनुभाग-बंध करता है । इस अवस्था के पूर्व गोत्र कर्म का अजघन्य बंध अनादि है ।

जघन्य बंध होने पर अजघन्य बंध अध्रुव है ।

जघन्य बंध करके सम्यक्त्व होने पर उच्च गोत्र का अजघन्य बंध होने पर अजघन्य बंध सादि है ।

अभव्य की अपेक्षा गोत्र कर्म का अनुभाग-बंध कभी नष्ट नहीं होता, अत: अजघन्य बंध ध्रुव है ।

सत्थाणं धुवियाणम-णुक्कस्समसत्थगाण धुवियाणं । अजहण्णं च य चदुधा, सेसा सेसाणयं च दुधा ॥179॥

≈अन्वयार्थ - (सत्थाणं धुवियाणं) प्रशस्त ध्रुव प्रकृतियों का (अणुक्कस्सं) अनुत्कृष्ट बंध (च) और (असत्थगाण धुवियाणं) अप्रशस्त ध्रुव प्रकृतियों का (अजहण्णं) अजघन्य बंध (चदुधा) सादि आदि चार प्रकार का है

≈(य) और (सेसा) इन दोनों के शेष बंध (च) और (सेसाणयं) शेष अध्रुव प्रकृतियों के जघन्यादि सभी बंध (दुधा) सादि और अध्रुव के भेद से दो प्रकार के हैं ॥179॥

नियम

जिन प्रकृतियों का जघन्य अनुभाग-बंध विशिष्ट गुणस्थान में होता है और

जो ध्रुव-बंधी प्रकृति है,

उनका अजघन्य बंध चार प्रकार का होता है ।

जिन प्रकृतियों का उत्कृष्ट अनुभाग-बंध गुणस्थान विशेष में होता है और

जो ध्रुव-बंधी प्रकृति है,

उनका अनुत्कृष्ट अनुभाग-बंध चार प्रकार का होता है ।

उत्तर प्रकृतियों में जघन्य-अजघन्य आदि भेद

	जघन्य	अजघन्य	उत्कृष्ट	अनुत्कृष्ट
ध्रुव-बंधी प्रकृतियों में				
तैजस-2 अगुरुलघु, निर्माण प्रशस्त वर्णादि-4	2	2	2	4
ज्ञानावरण - 5 दर्शनावरण - 9 अन्तराय - 5 मिथ्यात्व - 1 कषाय - 16 भय-जुगुप्सा - 2 उपघात अप्रशस्त वर्णादि - 4	2	4	2	2
73 अध्रुव-बंधी प्रकृतियाँ	2	2	2	2

सत्ती य लदादारू, अट्ठीसेलोवमाहु घादीणं ।
दारुअणंतिमभागोत्ति देसघादी तदो सव्वं ॥180॥

≈अन्वयार्थ – (घादीणं) घातिया कर्मों की (सत्ती) शक्ति (लतादारू अट्ठीसेलोवमाहु) लता, दारु, अस्थि और शैल के समान है तथा

≈(दारुअणंतिमभागोत्ति) दारुभाग के अनन्तवें भागपर्यन्त शक्ति (देसघादि) देशघाति है।

≈(तदो) उसके आगे शैलभागपर्यन्त शक्ति (सव्वं) सर्वघाति है ॥180॥

www.JainKosh.org

स्पर्धक

वर्गणाओं के समूह को स्पर्धक कहते हैं ।

स्थिति की अपेक्षा निषेक संज्ञा होती है और अनुभाग को बताने के लिए स्पर्धक संज्ञा है ।

www.JainKosh.org

घातिया कर्मों का अनुभाग

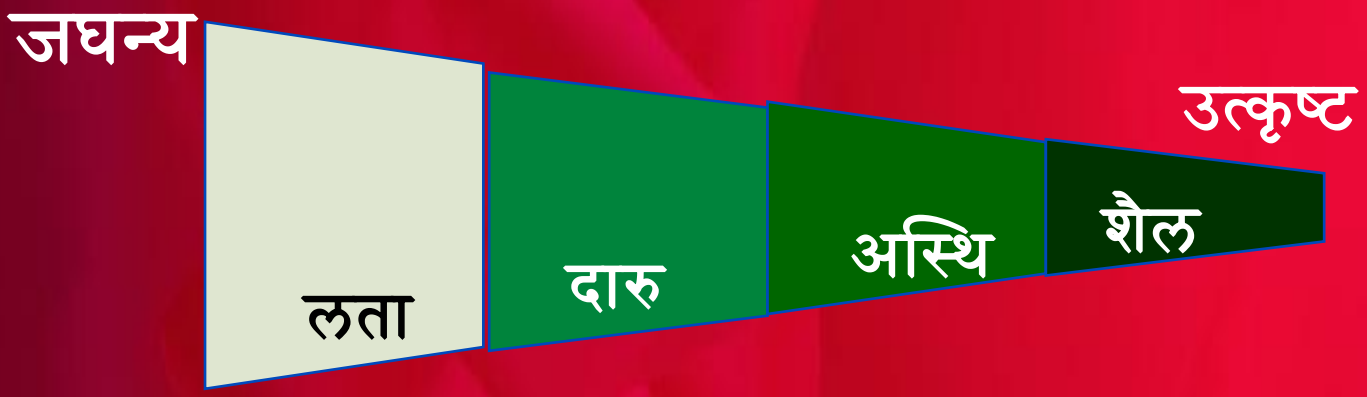

लता
- बेल

दारु
- काष्ठ, लकड़ी

अस्थि
- हड्डी

शैल
- पाषाण, पर्वत

जैसे इनमें उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कठोरता पायी जाती है, उसी प्रकार घातिया कर्मों के अनुभाग अर्थात् फल देने की शक्ति इन-इन स्पर्धकों में अधिक-अधिक पायी जाती है।

घातिया कर्मों की अनुभाग-शक्ति दो प्रकार की है-

सर्वघाती

- आत्मा के गुण का पूर्णरूप से घात करने वाला ।

सारे लतारूप स्पर्धक देशघाती होते हैं ।

देशघाती

- आत्मा के गुण का एकदेशरूप से घात करने वाला ।

दारु के अनंतवे भाग स्पर्धक देशघाती होते हैं ।

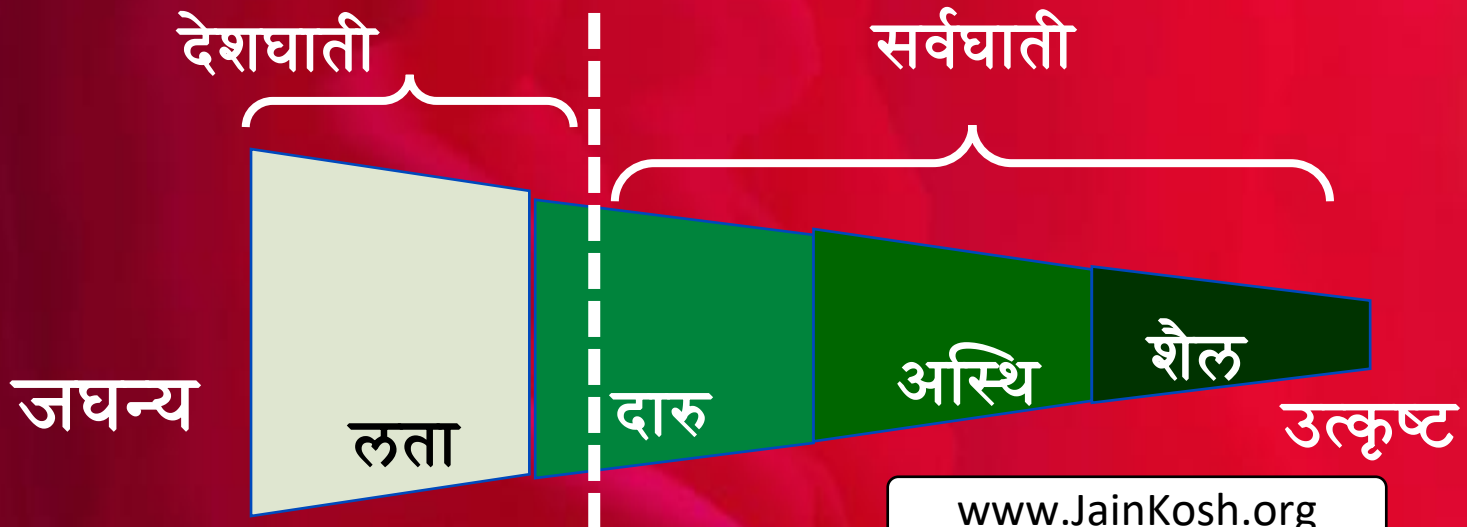

दारु के अनंत बहुभाग स्पर्धक सर्वघाती होते हैं ।

अस्थि और शैल स्पर्धक सर्वघाती होते हैं ।

www.JainKosh.org

देसोत्ति हवे सम्मं, तत्तो दारूअणंतिमे मिस्सं ।
सेसा अणंतभागा, अट्ठिसिलाफड्ढया मिच्छे ॥181॥

≈अन्वयार्थ – (देसोत्ति) देशघाति स्पर्धक तक शक्ति (सम्मं) सम्यक्त्वप्रकृति रूप (हवे) है ।

≈(तत्तो) उसके पश्चात् (दारू अणंतिमे) दारू के शेष अनन्त बहुभाग के अनंतवें भागरूप शक्ति (मिस्सं) मिश्ररूप है ।

≈(सेसा अनंतभागा) दारू के शेष अनंतबहुभाग स्पर्धक तथा (अत्थिसिलाफड्ढया) अस्थि और शैलरूप स्पर्धक (मिच्छे) मिथ्यात्व प्रकृति में हैं ॥181॥

www.JainKosh.org

दर्शन मोहनीय का अनुभाग

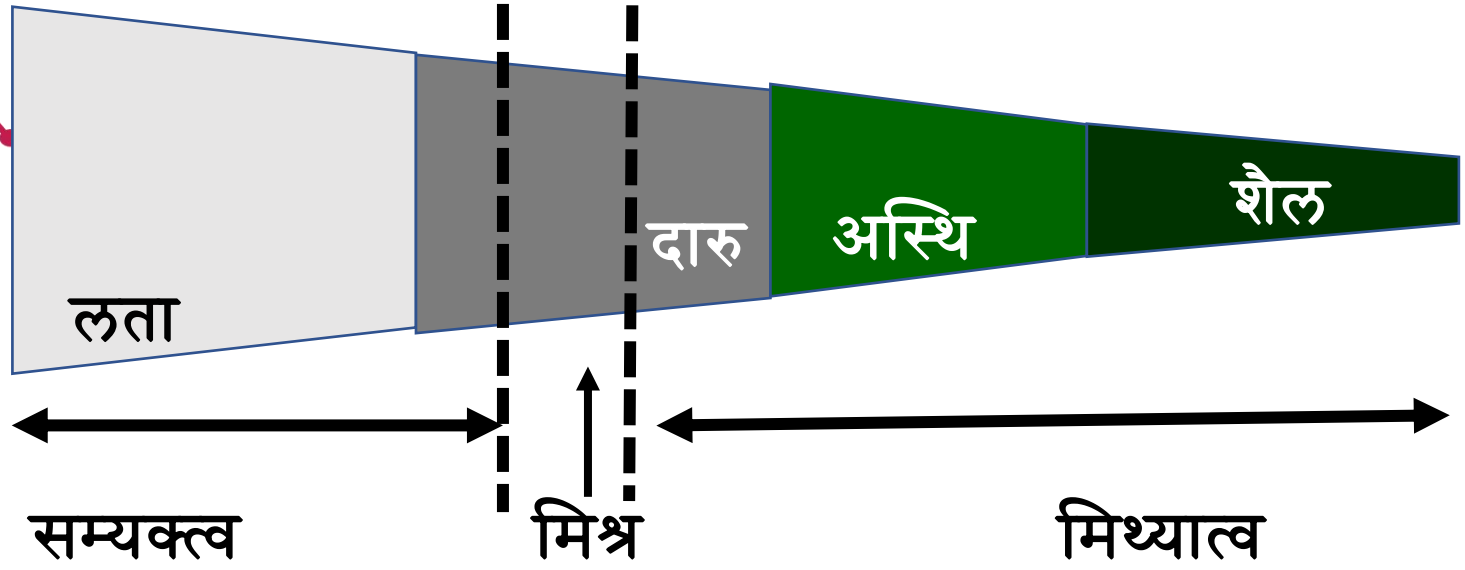

लता भाग दारु का अनंतवाँ भाग	सम्यक्त्व प्रकृति
दारु का अगला अनंतवाँ भाग	मिश्र प्रकृति
दारु का शेष अनंत अनुभाग तथा अस्थि, शैल	मिथ्यात्व प्रकृति

यह ही एक प्रकृति है, जिसमें भिन्न-भिन्न अनुभाग के कारण प्रकृतियों के नाम बदल जाते हैं ।

अन्य किसी प्रकृति में अनुभाग बदलने से प्रकृति का नाम नहीं बदला है ।

आवरणदेसघादंतरायसंजलणपुरिससत्तरसं ।
चदुविधभावपरिणदा, तिविधा भावा हु सेसाणं ॥182॥

≈अन्वयार्थ – (आवरणदेसघाद) ज्ञानावरण, दर्शनावरण में देशघाती 7 प्रकृतियाँ (अंतराय-संजलणपुरिससत्तरसं) 5 अंतराय, संज्वलन चार कषाय, पुरुषवेद – इस प्रकार 17 प्रकृतियाँ (चदुविधभावपरिणदा) चारों प्रकार के भावरूप परिणमन करती हैं ।

≈(सेसाणं) शेष सर्व प्रकृतियाँ (तिविहा भावा हु) तीन प्रकार के भावरूप परिणमन करती हैं ॥182॥

अनुभाग के प्रकार

प्रकृतियाँ	लता, दारु, अस्थि, शैल	लता, दारु, अस्थि	लता, दारु	लता
देशघाती ज्ञानावरण-4, देशघाती दर्शनावरण-3, संज्वलन-4, पुरुषवेद, अंतराय-5	✓	✓	✓	✓
सर्वघाती केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण 5 निद्राएँ 12 कषाय	दारु, अस्थि, शैल	दारु, अस्थि	दारु	✗
8 नोकषाय	✓	✓	✓	✗

क्या मिथ्यात्व अन्य सर्वघाती के साथ ले सकते हैं ? हाँ, उसके जैसा ही है ।

अवसेसा पयडीओ, अघादिया घादियाण पडिभागा ।
ता एव पुण्णपावा, सेसा पावा मुणेयव्वा ॥183॥

≈अन्वयार्थ – (अवसेसा अघादिया पयडीओ) शेष अघातिया कर्मों की प्रकृतियाँ (घादियाण पडिभागा) घातिया कर्मों के समान प्रतिभागयुक्त हैं अर्थात् उनके स्पर्धक भी तीन भावरूप परिणत होते हैं ।

≈(ता एव) अघातिया कर्म प्रकृतियाँ ही (पुण्णपावा) पुण्य और पापरूप होती हैं ।

≈(सेसा) शेष घातिकर्म की प्रकृतियाँ (पावा) पापरूप ही (मुणेदव्वा) जानना चाहिये ॥183॥

www.JainKosh.org

अघातिया कर्म के स्पर्धक

अघातिया कर्म की प्रकृतियाँ घातिया कर्म की तरह प्रतिभाग युक्त जानना । अर्थात् उनके स्पर्धक तीन रूप ही होते हैं। मात्र गुड़रूप अथवा मात्र निम्बरूप नहीं होते हैं।

अघातिया कर्म की प्रकृति पुण्य और पापरूप है ।

घातिया कर्म की सारी प्रकृतियाँ पापरूप ही हैं ।

www.JainKosh.org

गुडखंडसक्करामिय-सरिसा सत्था हु णिंबकंजीरा । विसहालाहलसरिसाऽसत्था हु अघादिपडिभागा ॥184॥

≈अन्वयार्थ – (अघाडिपडिभागा) अघाति कर्मों की (सत्था) प्रशस्त प्रकृतियों में शक्ति के भेद (गुडखंडसक्करामियसरिसा) गुड, खांड, शर्करा और अमृत के समान हैं ।

≈(असत्था हु) अप्रशस्त प्रकृतियों में (णिंबकंजीरा विसहालाहलसरिसा) निम्ब, कांजीर, विष, हलाहल के समान अनुभाग है ॥184॥

≈इस प्रकार अनुभाग-बंध का स्वरूप कहा ।

www.JainKosh.org

अघातिया कर्मों का अनुभाग

प्रशस्त प्रकृतियाँ (42)

जैसे गुड़, खाण्ड आदि अधिक-अधिक मिष्ट हैं, वैसे इन प्रशस्त प्रकृतियों के स्पर्धक उत्तरोत्तर मिष्टरूप हैं । अर्थात् अधिक-अधिक सांसारिक सुख के कारण हैं ।

अप्रशस्त प्रकृतियाँ (37)

जैसे निंब, कांजीर आदि उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कड़वे हैं, अधिक-अधिक दु:खद हैं, वैसे इन अप्रशस्त प्रकृतियों के स्पर्धक उत्तरोत्तर अधिक-अधिक कड़वे हैं, अधिक-अधिक दु:ख के कारण हैं ।

प्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग प्रकार

गुड़, खांड, शर्करा, अमृत

गुड़, खांड, शर्करा

गुड़, खांड

अप्रशस्त प्रकृतियों का अनुभाग प्रकार

निंब, कांजीर, विष, हलाहल

निंब, कांजीर, विष

निंब, कांजीर

मात्र गुड़रूप अथवा निंबरूप अनुभाग वाले स्पर्धक नहीं पाए जाते हैं ।